आपातकाल में सृजन फुलवारी

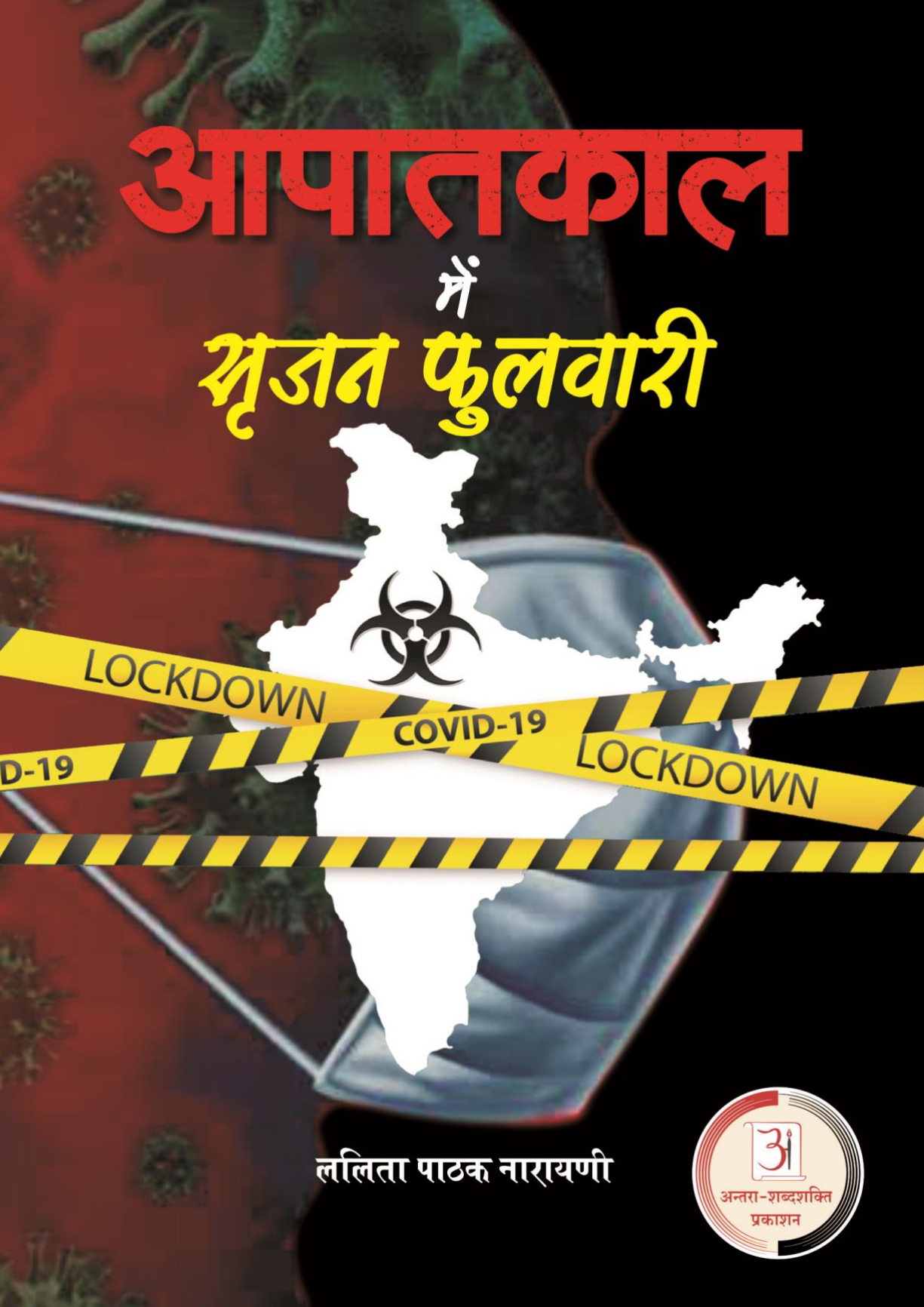

ललिता पाठक नारायणी

अन्तरा-शब्दशक्ति प्रकाशन

आपातकाल में सृजन फुलवारी

ललिता पाठक नारायणी

अन्तरा शब्दशक्ति प्रकाशन
वारासिवनी, मध्यप्रदेश

978-93-5372-177-0

संपादक- **डॉ.** प्रीति समकित सुराना

तकनीकी संपादक एवं आवरण चित्र - संदीप कुमार सोनी, वारासिवनी

मुख्य कार्यालय - 15 नेहरू चौक, वारासिवनी, जिला बालाघाट (म.प्र.) 481331

दूरभाष- (कार्या.) 07633-253159

मोबाईल- 9424765259

ईमेल- antrashabdshakti@gmail.com

वेबसाईट- www.antrashabdshakti

प्रथम संस्करण - 2020, ललिता पाठक नारायणी

मूल्य - 50.00 रूपये

मुद्रक- शैलू कम्प्यूटर्स, वारासिवनी

THE BOOK WRITTEN BY LALITA PATHAK NARAYANI

वैधानिक चेतावनीः- इस पुस्तक का सर्वाधिकार सुरक्षित है। लेखक की लिखित अनुमति के बिना इसके किसी भी अंश को फोटोकॉपी एवं रिकार्डिंग सहित इलेक्ट्रोनिक अथवा मशीनी किसी भी माध्यम में अथवा संग्रहण और पुनर्प्रयोग की प्रणाली द्वारा किसी भी रूप में पुनरूत्पादित अथवा संचारित प्रसारित नहीं किया जा सकता है। प्रस्तुत पुस्तक की समस्त रचनाएँ लेखक द्वारा अन्तरा-शब्दशक्ति प्रकाशन को प्रेषित की गई है। अतः प्रत्येक रचना की मौलिकता के किसी भी दावे हेतु लेखक जिम्मेदार है। प्रस्तुत पुस्तक के घटनाक्रम पात्र, भाषाशैली एवं स्थान सभी लेखक की कल्पना है। किसी भी प्रकार के वाद-विवाद के लिए प्रकाशक का सहमत होना अनिवार्य नहीं है।

आपातकाल में सृजन फुलवारी

सादर नमन,

आज देश जिस भयावह स्थिति से गुज़र रहा है उस स्थिति में देश का हर एक व्यक्ति या ये कहें कि विश्व का प्रत्येक मानव आर्थिक, मानसिक और शारीरिक रुप से व्यथित है। कोरोना (covid19) जैसी महामारी ने पूरे विश्व को नैराश्य के दौर में लाकर खड़ा कर दिया है।

ऐसे समय में जब हमें अनुशासित रहना है, सामाजिक दूरी बनाकर सीमित संसाधनों में जीना है, एकदम से अपनी दिनचर्या को बदलकर एकाकी जीवन यापन का अभ्यास करना है और मन में महामारी की दशहत से होने वाली नकारात्मकता और निराशा को भी नियंत्रित करना है तब सबसे सही हल होता है खुद को रचनात्मकता से जोड़ लेना। जो व्यक्ति जिस कला से जुड़ा हो उसे मनः स्थिति के अनुरुप उसी कला में सृजनात्मक हो जाना चाहिए।

बस इसी विचार ने एक दिन प्रेरित किया कि अन्तरा शब्दशक्ति प्रकाशन से जुड़े रचनाकारों को एक सृजनात्मक सरप्राइज़ दिया जाए।

अन्तरा शब्दशक्ति और जीवन के सहभागी प्रिय 'समकित सुराना' से परामर्श किया तो उन्होंने भी सहर्ष हामी भर दी। मेरे संपादन के साथ तकनीकी संपादन की सारी जिम्मेदारी हमारे तकनीकि संपादक प्रिय 'संदीप सोनी' ने ले ली और इक्यावन दिन के लॉकडाउन में एक साथ 111 किताबों का निःशुल्क ईसंस्करण तैयार किया जिसका मुद्रित संस्करण देश के परिस्थितियाँ सामान्य होते ही रचनाकारों की इच्छानुसार सशुल्क किया जा सकेगा।

अन्तरा शब्दशक्ति संस्था के सभी सदस्यों ने सृजन को हमेशा प्रेरित किया है जिसके लिए मैं सभी की हृदय से आभारी हूँ।

आपातकाल में कुछ न करने की सज़ा को कुछ करके खत्म करने में सहयोगी बने समकित, संदीप-टीना सोनी, बच्चों और पूरे परिवार की आभारी हूँ जिन्होंने हर पल मुझे मजबूत बनाए रखा।

आशा है ये सरप्राइज़ सभी रचनाकारों को उत्साहित करेगा और पाठकों को हमारा यह प्रयास पसंद आएगा। हमें प्रतिक्रियाओं की प्रतीक्षा रहेगी।

सादर आभार

संस्थापक एवं संपादक
अन्तरा शब्दशक्ति प्रकाशन
एवं पंजीकृत संस्था
डॉ प्रीति समकित सुराना

अनुक्रमणिका

1.	वृद्ध पीपल झूमता है	6
2.	इस शहर में अब दम घुटता है	7
3.	लाज बड़ी हठ धर्मी है	8
4.	चित्त में बस चेतना हो	9
5.	जन्मदिन मेरा	10
6.	मठ की नक्काशी लगती है	11
7.	काफिले कछुए बनाता	12
8.	चौराहा	13
9.	अभिव्यक्ति	14
10.	एक था राजा-एक थी रानी	15
11.	चलो कहीं हम दूर चलें	16
12.	दीवारें	17
13.	चिता जलाते हाथों में	18
14.	हौले हौले से	19
15.	मौसम की बेरुखी से	20
16.	आजाद क्यों छोड़ो	21

वृद्ध पीपल झूमता है

आ रही ऋतुराज की शाही सवारी,
शीत का अभिमान भी कम हो रहा है!
घुल गई मदहोश खुनकी चंचल हवा में
मन गंध माधव हो रहा है!

बौरा गया है आम्र पादप,
वृद्ध पीपल झूमता है!
फुनगियों पर पल्लवों का,
आगमन भी हो रहा है!

दूब अपना सर उठाकर,
पत्थरों से पूछती है!
आज भी दिल में तुम्हारे,
क्यों नहीं कुछ हो रहा है!

चिटकी कली ने कह दिया,
सब रंग डूबी तितलियों से!
ऋतुराज के शुभ आगमन का,
भव्य स्वागत हो रहा है!

इस शहर में अब दम घुटता है

चलो कहीं हम दूर चलें
इस शहर में अब दम घुटता है,
वक्त हो चला बूढ़ा सा अब
धीमे-धीमे... कटता... है।

जीने के लिए खुशियां कब थी
ये कैसे तुम्हें समझाएं हम,
एक दर्द छुपा था सीने में
उस पर से भी पर्दा उठता है।

लहरों में बहकर आखिर यूं
हम कब तक दरिया पार करें,
तिनके का सहारा मांगा था
अब वह भी मुझसे डरता है।

कुछ दिन का मेहमान है पंक्षी
एक दिन सबको उड़ जाना है,
क्षणभंगुर जीवन का सपना
तो हाय -हाय क्यों करता है।

लाज बड़ी हठ धर्मी है

चिथड़ों में सब ढका रहा
पोशाकों में बेशर्मी है
जानवरों में रहे सलामत
इंसानों में तन ज़ख्मी हैं।

दर-दर ठोकर खाते रहते
खाक छानते सड़कों पर
चोटों का कुछ असर नहीं
बस भूख बड़ी बेदर्दी है।

राहु, केतु, शनि सभी तो
अगल- बगल ही रहते हैं
पर ऐसा लगता है जैसे
कुछ और ग्रहों की गर्मी है।

शाम-सबेरे भीख मांगते
भरी दुपहरी सोते हैं
रातों में रखवाली करते
बस, लाज बड़ी हठधर्मी है।

चित्त में बस चेतना हो

रात का अस्तित्व है तो,
है सुहानी भोर भी।
पाताल के कुछ अंश हैं तो
है गगन के छोर भी।

सामर्थ्य है तो है सलामत,
जिंदगी की डोर भी।
मझधार के दोनों किनारे,
इस ओर भी उस ओर भी।

चित्त में बस चेतना हो,
संकल्प हो दृढ़ साथ में।
तो जीत जाएंगे सभी
बलवान भी कमजोर भी।

जन्मदिन मेरा

जलता है हर साल मेरा, बुझता है हर साल मेरा
कटता है हर साल मेरा, मरता है हर साल मेरा
फिर भी ताली बजा बजाकर
खुश होता हर साल मेरा!!

महंगे महंगे गुलदस्तों में
खिल जाता हर साल मेरा
मुरझाए फूलों में कचरा
जाता है हर साल में, फिर भी ताली....!

कई रंग के गुब्बारों में
भर जाता हर साल मेरा
फिर आलपिन की नोंकों से
फोड़ा जाता हर साल मेरा, फिर भी ताली.....!

रंग बिरंगी झालर से
सजता है हर साल मेरा
जाने कैसे अंधकार में
गुम होता हर साल मेरा, फिर भी ताली.....!

बेश कीमती परिधानों में
छुपता है हर साल मेरा
पर चेहरे पर एक नई
झुर्री देता हर साल मेरा, फिर भी ताली.....!

तारीखों के पन्नों पर
जोड़ा जाता हर साल मेरा
गिनती गिनते गिनते ही
कम होता एक साल मेरा, फिर भी ताली.....!

मठ की नक्काशी लगती है

होली के दिन भाभी हमको
लजी लजाई लगती है
खेतों की हरियाली जैसे
कनक उगाई लगती है।
होली के दिन भाभी.....!

पीली चुनरी ओढ़े सरसों
सजी सजाई लगती है।
हाथ की मेहंदी माथे बिंदी
मठकी नक्काशी लगती हैं।
होली के दिन भाभी.....!

फल से डाली लदी हुई है,
झुकी झुकाई लगती है।
तिस पर कोयल जैसी बोली,
रस भरी मलाई लगती है।
होली के दिन भाभी.....!

त्योहारों पर घर की ड्योढ़ी
पुती पुताई लगती है।
किन शब्दों में बयां करें
जैसे बिन ब्याही लगती है।
होली के दिन भाभी.....!

काफिले कछुए बनाता

बेतहाशा दौडता,
खरगोश बनता आदमी।
एक ठोकर अजनवी सी,
चित्त होता आदमी।

कुछ न पाता रेस मैं,
हार जाता आदमी।
बेतहाशा दौड़ता,
खरगोश बनता आदमी।

चीटियों सा रेंगता,
चोटी चडा़ आदमी।
है धरातल से गगन तक,
घूमता है आदमी।

काफिले कछुआ बनाता,
जीत जाता आदमी।
बेतहाशा दौड़ता,
खरगोश बनता आदमी।

चौराहा

तुम बिन किसी सड़क का कोई,
अस्तित्व नहीं चौराहे पर।
तुमसे ही चारों सड़कों को,
स्वामित्व मिला चौराहे पर।

कितने ही बड़े बुजुर्गों का,
बचपन बीता चौराहे पर।
जाड़ा, गर्मी, बरसातें हर,
मौसम है चौराहे पर।

दही जलेबी चाय पकौड़ी,
सुबह-सुबह चौराहे पर।
दुनिया देश जहां की खबरें,
सब कुछ है चौराहे पर।

भूले भटके कई मुसाफिर,
आते है चौराहे पर।
पता तुम्हारा लेकर ही,
मंजिल पाते चौराहे पर।

आते जाते लोग तुम्हारा,
नाम जपें चौराहे पर।
बाबाजी, बल्देव, सुलाकी,
नेतराम चौराहे पर।

पावन पर्व मनाया जाता,
जगह-जगह चौराहे पर।
दहन होलिका पूजन होता,
कदम -कदम चौराहे पर।

अभिव्यक्ति

अध जल गगरी अपने गम की,
कुछ यूं अभिव्यक्ति करती है।
भरी हुई गागर से कहती,
क्या तू मेरी तरह छलकती है।

मैं खुद में इतराती हंसती,
गाती और मटकती हूं।
तू भारी-भरकम एक जगह,
गूंगी सी बैठी रहती है।

मेरी चर्चा जगह-जगह पर,
मुझे सुनाई देती है।
तू कहीं-कहीं दो चार जगह,
बस कभी दिखाई पड़ती है।

भरी हुई गागर बेचारी,
मंद-मंद मुस्काती है।
खाली और भरे का चिंतन,
अंतर्मन में करती है।

एक था राजा, एक थी रानी

अक्सर मां की याद दिलाती
वही पुरानी एक कहानी
एक था राजा एक थी रानी
या गांव बसी थी बूढ़ी नानी!

घर आंगन से गांव गली
या खेत से लेकर ताल तलैया
डूबे जाते मढ़ा मढ़ैया
दूर-दूर तक पानी-पानी!

मां जंगल में महल बनाती
राजा रानी को भटकाती
आदि अंत या मध्य में जाकर
अक्सर लाती आंधी पानी!

फिर सूखी नदिया बाढ बुलाती
टूटी फूटी नाव चलाती
सात समंदर पार से लाती
अपने शहजादे की रानी!

भेड़ बकरियां शेर बुलाती
सांप नेवला संधि कराती
दुनियां भर में भ्रमण कराती
बाग बगीचा तितली रानी!

मां रातों में कमल खिलाती
दिन मे खिलती रात की रानी
ऐ मेरी मां का भोलापन था
या थी उसकी अनपढ़ वानी!

चलो कहीं हम दूर चलें

चलो कहीं हम दूर चलें
इस शहर में अब दम घुटता है,
वक्त हो चला बूढ़ा सा अब
धीमे-धीमे..... कटता... है।

जीने के लिए खुशियां कब थी
ये कैसे तुम्हें समझाएं हम,
एक दर्द छुपा था सीने में
उस पर से भी पर्दा उठता है।

लहरों में बहकर आखिर यूं
हम कब तक दरिया पार करें,
तिनके का सहारा मांगा था
अब वह भी मुझसे डरता है।

कुछ दिन का मेहमान है पंक्षी
एक दिन सबको उड़ जाना है,
क्षणभंगुर जीवन का सपना
तो हाय-हाय क्यों करता है।

दीवारें

ममता से भरपूर हमारे
घर की हैं ये दीवारें
हम कुछ भी कह लेते
फिर भी... चुप रहती ये दीवारें!

सुबह से निकले शाम तलक
तो राह देखती दीवारें
तुम जल्दी घर वापस आना
आज्ञा सी देती दीवारें!

दिन के भरे उजाले में
अश्रु बहाती ये दीवारें
पर अर्धरात्रि में चीख-चीख
हंसकर बतलाती दीवारें!

चार दीवारी के भीतर ही
दफ़्न हो गईं दीवारें
गर खुद में अर्द्धनग्न हैं
फिर भी लाज बचाती ये दीवारें!

मानव क्या पशु, पक्षी
तरुवर शरण में लेतीं
जीवन और मरण का
लेखा-जोखा रखतीं ये दीवारें!

चिता जलाते हाथों में

मैंने अपनी आँखो से
पाषाण पिघलते देखा है,
पत्थर दिल के मानव को
सौ बार बिलखते देखा है, पाषाण पिघलते...!

कहते है वो मानव कम
मुर्दा ज्यादा लगता है,
आबादी से दूर कहीं
श्मशानों में रहता है।
चिता सजाते हाथों में भी
प्यार पनपते देखा है, पाषाण पिघलते....!

राम नाम का शब्द गूँजता
कफ़न ओढती काया में,
घिरा हुआ है अपवादो में
रहता मुर्दो की छाया में
आग बरसती आँखों में भी
बर्फ बरसते देखा है, पाषाण पिघलते...!

बारिश होती धूप निकलती
कुदरत भेद नही करती,
मानव मे ही मानव का
भेष बदलते देखा है,
मरघट की सीढ़ी पर मैंने
पनघट आते देखा है, पाषाण पिघलते...!

हौले हौले से

वह थम थम कर जब चलती है
तो धरती भी थम जाती है
वह गिर न पडे ये सोच हवा
बहती है हौले-हौले से, वह थम-थम.....!

वह डगमग डगमग करती है
कुछ तौल रही है हाथो से
उड़ने को तत्पर रहती है
पग रखती धीरे-धीरे से, वह थम-थम.....!

जीना चढ़ने का शौक उसे
गोदी में सीढ़ी नही चढे
कोई बाधा कोई जू जू(कीट)
रिंग जाती तीर तीरे से वह, थम-थम.....!

पापा को पापा कहती
पर माँ का लेती नाम सदा
किलकारी भरती फूलो सी
मुस्कराती हल्के-हल्के से वह, थम- थम.....!

पूरा घर न्यौछावर है
कोई फाँस न गड़ जाये
फिर भी नजर समाजाती,
हर दिन ही गहरे-गहरे से, वह थम-थम.....!

मौसम की बेरुखी से

आंखों की एक नमी से
दर्पण में धुंधलापन है
मौसम की बेरुखी से
पत्तों में पीलापन है

अंधेरों की आड़ लेकर
कुछ हादसे हुए हैं
कोहरे में डूबी सुबह
कुछ तो उजाला पन है

आओ चलो करें हम
कुछ चाहतों की बातें
दुश्मन की भी गली में
कुछ तो अपनापन है

हाथों में रेत लेकर
मायूस क्यों खड़े हो
सूखी जमीं के नीचे
कुछ तो गीलापन है।

आजाद क्यों छोड़ो

धरोहर आँख की है जो
उसे आँखो मे रहने दो
सभा के बीच में लाकर
न यूँ उपहास करवाओ, धरोहर.....!

किसी की वेदना पर शब्द
दो संवेदना के तुम
न हो गर आँख में आँसू
खुशी मत होंठ पर लाओ, धरोहर.....!

करो मत बात कुछ ऐसी कि
जो दिल को चुभोती हो
खुशी के आगमन पर भी
दुखों की बात मत छेडो, धरोहर.....!

जिन्हें आजाद करना है
उन्हें मत कैद में रखो
जिन्हें है कैद में रखना
उन्हें आजाद मत छोड़ो, धरोहर.....!

जलाओ दीप मंदिर में
चढ़ाओ चूडियाँ बिंदी
किसी वैद्धव्य का भी तो
कोई श्रंगार करवाओ, धरोहर.....!

हिन्द व हिन्दी का सम्मान
है प्रमाण देशभक्ति का
आइए करें
सृजन शब्द से शक्ति का

रचनाकार

ललिता पाठक नारायणी

१५३ खुशहाल पर्वत
प्रयागराज

Email- symbolpathak@gmail.com
Mobile - 9455426636, 8842580571

सृजन का संतोष आपातकाल के भय और संताप हर लेता है। गहन उदासी के क्षणों में भी हम संतोष पूर्ण सकून हासिल कर सकते हैं। अंतरा शब्दशक्ति का यह नव प्रयास निसंदेह सराहनीय है, मैं मुक्त कंठ से इसकी प्रशंसा करती हूं एक और जहां हम खाली समय का सदुपयोग कर पाएंगे वहीं दूसरी ओर इस कालखंड की रचनाएं हमें भविष्य में भी प्रेरित करती रहेंगी।

हिंदी साहित्य में इस काल को कोरोना से पहले और कोराना के बाद के नाम से जाना जाएगा, और इस बीच जो कुछ लिखा जाएगा उसकी समीक्षा में आपातकाल का सृजन यह तथ्य रेखांकित किया जाएगा...

पं.क्र. (04/21/05/207665/19)
अन्तरा शब्दशक्ति
www.antrashabdshakti.com

15, नेहरु चौक, मेन रोड वारासिवनी, जिला- बालाघाट (म.प्र.), पिन 481331
संपर्क- 9424765259, अणुडाकः antrashabdshakti@gmail.com

978-93-5372-177-0

मूल्य 50/-

अन्तरा शब्दशक्ति के लिंक्स

Website:- www.antrashabdshakti.com
Facebook page:- https://www.facebook.com/antrashabdshakti/
Fecbook group:- https://www.facebook.com/groups/antraashabdshakti/